चित्रकला में नारी अंकन को प्राथमिकता : एक विश्लेषण

निशा रानी
शोधार्थिनी
जैन कन्या पाठशाला स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, मुजफ्फरनगर, (उ0प्र0)
ईमेलः rajputnishaartist@gmail.com

प्रो0 वंदना वर्मा
शोध निर्देशिका
विभागाध्यक्षा, चित्रकला विभाग
जैन कन्या पाठशाला स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, मुजफ्फरनगर (उ0प्र0)

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 14.04.2025
Approved: 23.05.2025

निशा रानी
प्रो0 वंदना वर्मा

चित्रकला में नारी अंकन को प्राथमिकता : एक विश्लेषण

Vol. XVI, Sp.2Issue May 2025
Article No.16, Pg. 132-137

Online available at
https://anubooks.com/special-issues?url=jgv-si-2-rbd-college-bijnore-may-25

DOI: *https://doi.org/10.31995/jgv.2025.v16iSI005.016*

सारांश

चित्रकार का काम कठिन साधना है। चित्रकार को किसी योगी के समान ही समझना चाहिए। क्योंकि प्राचीन काल से ही भारतीय चित्रकला शैली में कला के नियमों पर ध्यान दिया जाता रहा है ताकि चित्रित आकृति आनुपातिक दृष्टि से आकर्षित करे, रेखाएँ कोमल हों और उसका आधार सुंदर हो। वैदिक युग या प्राचीन युग से ही नारी का आदर्श रूप प्राप्त होता है। बौद्धकाल में भी नारी आदर्श सौन्दर्य की प्रेरक बनी रही। सच तो यह है कि नारी सृष्टि का मूल आधार है। इसीलिए वह भारतीय संस्कृति में पूजनीय है। नारी श्रद्धा है, वह सौन्दर्य है और नारी ही वास्तव में प्रकृति है। नारी के विभिन्न रूप हैं। यह भी कहा जा सकता है कि नारी के उससे अधिक ही रूप हैं, जितने कि यह दुनिया देखना चाहती है। प्राचीन भारतीय चित्रकला हमारे अतीत का दर्पण बनी हुयी है। आदियुगीन वैभव, वस्त्र, विन्यास, भावमयी मुद्रायें सभी कुछ तो उन चित्राकृतियों में दृष्टिगत होता है। जन्म से मृत्यु पर्यन्त हमारा सारा जीवन ही चित्रकला से ओत–प्रोत है, भारतीय नारी प्रत्येक स्थल पर सौन्दर्य बिन्दु बनी हुई है। गृह, आँगन, वाह्य, सर्वत्र उसका स्वरूप देखने को मिलता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि चित्रकला में जीवन की अभिव्यक्ति निहित है। प्राचीन मूल ग्रन्थों में जैसे ज्योतिष शास्त्रों में, अहिवल चन्द्र अलंकार आलेखनों से युक्त है। पक्षी 'सकुन विचार' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में 'पक्षी तथा नारी' आकृतियों का सुन्दर समावेश देखने को प्राप्य है। 'चित्र प्रश्नम' ग्रन्थ में भी इसी प्रकार की चित्राकृतियाँ एवं मानवीय चित्रण दृष्टिगोचर होता है। ऐसा नहीं है कि नारी के प्रति कोरी शारीरिक आसक्ति के कारण ही उसके चित्र अंकन को विषय वस्तु बनाया गया हो। नारी ने अपने आपको हर क्षेत्र में एक आदर्श पहचान दी है, जिसके कारण उसका आन्तरिक और बाह्य दोनों ही सौन्दर्य में दैविय रूप के दर्शन होते हैं। यही कारण है कि भारतीय चित्रकला में नारी को प्राथमिकता ही नहीं बल्कि उच्च स्तर भी प्रदान किया गया है।

मुख्य बिंदु

चित्र, कला, नारी, अंकन, सौन्दर्य

**This article has been peer-reviewed by the Review Committee of JGV.*

चित्रकला प्राचीन विधा है। यह किसी भाषा की लिपि से भी अधिक पुरातन है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण का अध्ययन सभी चित्रकला शोधार्थियों को कर लेना चाहिए, जिसमें भाग–3 के अध्याय–35 से लेकर अध्याय–40 तक जो 'चित्रसूत्र' कहलाता है, उसमें चित्रकला की व्याख्या मिल जाती है। शरीर रचना और रंगों के बनाने तक के निर्देश भी चित्रसूत्र में दिये गये हैं। प्राचीन भारत में मंदिर निर्माण, चित्रकला और प्रतिमा निर्माण के सिद्धांत और अभ्यास विष्णुधर्मोत्तर पुराण के आधार पर ही निर्मित किए जाते थे। चित्रकार का काम कठिन साधना है। चित्रकार को किसी योगी के समान ही समझना चाहिए। क्योंकि प्राचीन काल से ही भारतीय चित्रकला शैली में कला के नियमों पर ध्यान दिया जाता रहा है, ताकि चित्रित आकृति आनुपातिक दृष्टि से आकर्षित करे, रेखाएँ कोमल हों और उसका आधार सुंदर हो। यह न बहुत दीर्घ हो और न बहुत छोटा हो। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के चित्रसूत्र अध्याय में चित्रकला के महत्त्व को बताया गया है– 'कलाओं में चित्रकला सबसे ऊँची है जिससे धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है।'[1] यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में पारिवारिक उत्सवों में चित्रों का महत्व बढ़ता चला गया। जिसमें नारी समाज ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 'धार्मिक ग्रन्थों से इस बात का पता चलता है कि ब्रह्मा भी जब सृष्टि की संरचना करने में असफल हो गये तब उन्होंने सहयोग के लिए शक्ति की आराधना की। तब शक्ति ने बिन्दु रूप धारण किया। तदनन्तर शिव तेजस्वरूप होकर उसमें प्रवेश कर गये। इन दो वस्तुओं के संयोग से नादतत्व (स्त्रीतत्व) का जन्म हुआ। इसी नाद और बिन्दु, पुरुष और स्त्री के आकर्षण का कारण बना। इसीलिए इसे काम की संज्ञा दी गई। हमारा धर्मशास्त्र इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करता है कि उपर्युक्त दो बिन्दुओं के अतिरिक्त श्वेत बिन्दु मिलकर ही कला का सृजन करते हैं। तभी तो कला के निमार्ण में स्त्री की भूमिका है।'[2] भारतीय वांगमय में नारी के अनेकानेक गुणों के कारण ही उसे पूज्य तो कहा ही गया है बल्कि यह भी कहा गया है कि 'जहाँ नारी की पूजा अर्थात सम्मान होता है वहाँ देवता निवास करते हैं।'[3]

सच तो यह है कि नारी सृष्टि का मूल आधार है। इसीलिए वह भारतीय संस्कृति में पूजनीय है। नारी श्रद्धा है, वह सौन्दर्य है और नारी ही वास्तव में प्रकृति है। नारी के विभिन्न रूप हैं। यह भी कहा जा सकता है कि नारी के उससे अधिक ही रूप हैं, जितने कि यह दुनिया देखना चाहती है। 'नारी और कला का सम्बन्ध भी अटूट है क्योंकि नारी अतीत से ही जन–मानस का एक अंग रही है, जो प्राचीन कलाओं के विकास की चरमाभिव्यक्ति के स्तर तक पहुंचते–पहुंचते वह कला की प्रेरणा–स्रोत बन गयी, विशेषकर चित्रकला में।'[4] ऐसा भी माना जा सकता है कि विभिन्न चित्रों से घर, परिवार और लोक की अभिव्यक्ति करने वाली नारी धीरे–धीरे स्वयं अभिव्यक्त होने लगी। 'सबसे प्राचीन मिट्टी के खिलौने लगभग 2500 ई. पू. सिंधु में पाए गए हैं, जो हाथ से डौलिया कर बनाए गए हैं, अर्थात उनके निमार्ण में सांचों का प्रयोग नहीं हुआ। उनके वर्ण्य विषय ये हैं– 1. स्त्री मूर्तियाँ 2. पशु–पक्षियों के रूप। पहले वर्ग की मूर्तियाँ मातृदेवी की हैं। उसकी पूजा किसी समय भूमध्य–सागर से लेकर गंगा के कांठे तक लोकप्रिय थी। वेदों में जिसे 'मही' माता और 'महानग्नी' कहा है, वह यही ज्ञात होती है।'[5] इसी प्रकार बलूचिस्तान में स्थित कुल्ली में सभ्यता की बात करें तो मकराना के तट क्षेत्र में इस सभ्यता के चिह्न पाये जाते हैं। 'कुल्ली में ही प्राप्त स्त्रियों की मूर्तियों में पशु आकृतियों की तरह रंग के चिह्न दिखाई नहीं देते। मूर्तियों के शरीर कमर तक ही हैं। नेत्र, बाल, नाभि, छाती इत्यादि को अलग–अलग, छोटी–छोटी गोलियों या बत्तियों से बनाया गया है। इसी प्रकार आभूषण तथा सिर की पोशाक भी बनाई गई है। नेत्रों के स्थान पर छोटी–छोटी गोलियाँ अन्दर फंसाकर बिठा दी गई हैं। छाती, गोलियों द्वारा आभूषणों से ढकी हुई और हाथ घुमावदार बनाये गये हैं। बालों की सज्जा ऊपर बंधे जूड़े के

रूप में की गई है या फिर कहीं–कहीं मणिकाओं के चौड़े गुलूबन्द बनाये गये हैं। यहीं से प्राप्त एक मूर्ति में स्त्री दो बच्चों को भुजाओं से पकड़े दर्शायी गयी है।'[6]

'प्राचीन भारतीय चित्रकला हमारे अतीत का दर्पण बनी हुयी है। आदियुगीन वैभव, वस्त्र, विन्यास, भावमयी मुद्रायें सब कुछ तो उन चित्राकृतियों में दृष्टिगत होता है। जन्म से मृत्यु पर्यन्त हमारा सारा जीवन ही चित्रकला से ओत प्रोत है, भारतीय नारी प्रत्येक स्थल पर सौन्दर्य बिन्दु बनी हुई है। गृह, आँगन, बाह्य, सर्वत्र उसका स्वरूप देखने को मिलता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि चित्रकला में जीवन की अभिव्यक्ति निहित है। प्राचीन मूल ग्रन्थों में जैसे ज्योतिष शास्त्रों में, अहिवल चन्द्र अलंकार आलेखनों से युक्त है। पक्षी 'सकुन विचार' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में 'पक्षी तथा नारी' आकृतियों का सुन्दर समावेश देखने को प्राप्य है। 'चित्र प्रश्नम' ग्रन्थ में भी इसी प्रकार की चित्राकृतियाँ एवं मानवीय चित्रण दृष्टिगोचर होता है।'[7]

देखा जाए तो भारतीय चित्रकला की परम्परा प्राचीनतम है। चित्रकला सम्बन्धी ज्ञान के उपनिषदों में अनेक प्रसंग हैं। यहाँ तक कि बौद्ध धर्मग्रन्थ 'विनयपिटक' में (जिसकी रचना चौथी सदी ईसा पूर्व पाली भाषा में हुई थी) राजा प्रसेनजीत के चित्रण का वर्णन मिलता है। जबकि उससे भी पूर्व रामायण तथा महाभारतकालीन ग्रन्थों में भी चित्रकला का वर्णन प्राप्त होता है। इन युग के महलों व मन्दिरों की सज्जा आकर्षक चित्रों से की जाती थी। प्राचीन युग में चित्रों के प्रकार पर प्रकाश डालते हुए डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त लिखते हैं– 'भारतीय चित्रकला का गूढ़तम अध्ययन करने से यह बात पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है कि प्राचीन युग में चार प्रकार के चित्रों का सृजन होता था। ये चार प्रकार के चित्र थे, विद्ध–चित्र, अविद्ध–चित्र, रस–चित्र तथा भूमि–चित्र। विद्ध–चित्र का तात्पर्य है यथार्थ चित्रण यानी मूल रूप में चित्रकार उन उपादानों का वैसे ही अंकन करता है जैसा वह अपने चक्षुओं से अवलोकन करता है। अविद्ध चित्रों का तात्पर्य काल्पनिक चित्रों से था। चित्रविद् किन्हीं भावनाओं, दृश्यों से उत्प्रेरित होकर कल्पना शक्ति द्वारा जिन चित्रों की रचना करता था, वे ही चित्र इस कोटि में आते हैं। रस चित्रों का अंकन दर्शक में विभिन्न रसों की निष्पत्ति कराने हेतु किया जाता था। भूमि चित्रों का सम्बन्ध लोक कलाओं जैसे अल्पना, पात्र अलंकरण, माण्डना, गोदना आदि से था। उपनिषद् काल से लेकर मध्य युग तक की चित्रकला एक कड़ियों की भांति जुड़ा हुआ है। उपनिषद् काल से बौद्ध काल तक की चित्रकला में सौदर्न्यात्मक रूप में नारी अंकन प्राप्य है। भारतीय गुहा चित्रों में जो अति प्राचीन है या गुप्तकालीन हैं, सर्वत्र नारी की मोहक व आदर्श रूप का चित्रण, उनकी मोहक भंगिमायें दर्शनीय हैं।'[8]

उपरोक्त कथनानुसार यह बात सरलता के साथ समझ में आ जाती है कि प्राचीन काल में न सिर्फ विधिवत चित्रकला का ज्ञान फल–फूल रहा था बल्कि नारी सौन्दर्य से प्रभावित होकर उसका अंकन भी किया जा रहा था। जिससे यह बात भी सिद्ध होती होती है कि प्राचीन काल में नारी को पर्याप्त सम्मान प्राप्त था और उसका समाज में विशेष स्थान था। हालांकि 'कला में नारी का अंकन क्यों हुआ एक विवेचनात्मक गूढ़ विषय है। इसका सबसे बड़ा कारण आध्यात्मिक है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश के उपासकों ने त्रिदेवों की अर्चना तो की है साथ ही पुरुष और प्रकृति के अटूट सम्बन्धों के कारण इन त्रिदेवों के लिए एक–एक नारी शक्ति की कल्पना भी की, जो इस प्रकार प्रकाश में आयी–विष्णु के साथ सुख, समृद्धि और वैभव की देवी लक्ष्मी, ब्रह्मा के साथ विद्या की तथा बुद्धि की देवी सरस्वती तथा शिव के साथ आदि शक्ति पार्वती की रचना करके पुरुष और प्रकृति का संयोजन पूर्ण किया गया। भारतीय चित्रकला में नारी को पावन, आदर्श तथा सौन्दर्य की देवी मान कर उसके मनोरम भगिमाओं का अंकन किया गया है जो सदा ही मानव को प्रेरणा देती रहती है।

Journal Global Values, Vol. XVI, Sp.2 Issue May 2025 ISSN: (P)0976-9447, (e)2454-8391, Impact Factor 8.888(SJIF)
https://doi.org/10.31995/jgv.2025.v16iSI005.016

'जननी', 'भगिनी' और पत्नी के तीन रूपों में से प्रेम एवं वात्सल्य प्रधान, पत्नी तथा माता के रूप को श्रेष्ठ स्थान प्रदान किया गया है।'[9]

इसमें कोई सन्देह नहीं करना चाहिए कि नारी न सिर्फ जननी ही रही बल्कि वह मानव जीवन की प्रेरणा भी रही है। कला उसका नैसर्गिक गुण रहा है। जिसके लिए डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त स्वीकारते हैं – 'नारी, कला कृतियों के सृजन में एक महत्वपूर्ण प्रेरणा बिन्दु रही है। भारतीय चित्रकला प्रकृति के साथ ही नारी के विलक्षण सौन्दर्य से प्रेरित होकर कला का सृजन करता आ रहा है। नारी के नाना रूपों में उसने त्रैलोक्य का सौन्दर्य देखा है तभी तो उसने अनगिनत स्वरूपों में नारी को बांधने का प्रयत्न किया है।'[10]

वैदिक युग या प्राचीन युग से ही नारी का आदर्श रूप प्राप्त होता है। बौद्धकाल में भी नारी आदर्श सौन्दर्य की प्रेरक बनी रही। श्रीमती सरला दुआ अपने शोध ग्रंथ ''आधुनिक हिन्दी साहित्य में नारी'' में पुष्टि करते हुए लिखती हैं– 'नारी के सौन्दर्य का बौद्ध काल में सम्मान था। उस युग की मूर्ति एवं चित्रकलाओं में भी नारी के अनाघ्रात, अवदात चित्रों की अवधारणा होती है। अजन्ता, बाघ और एलोरा के चित्रों से हम उस युग के नारी सौन्दर्य चित्रण की कल्पना कर सकते हैं।' इस कथन की पुष्टि संस्कृत साहित्य के अनेकानेक ग्रन्थ भी करते हैं। संस्कृत साहित्य में नाटक ऐसे हैं जिनमें कला और नारी के परस्पर अटूट सम्बन्धों को दिखाया गया है। जिनमें अनेक अवसरों पर नारी स्वयं चित्र अंकित करती हुई नजर आती है। वह कहीं विरह व्यथा से व्यथित नायिका धैर्य प्राप्त हेतु अपने प्रिय का चित्र अंकित करती है तो कहीं दुखी हृदय नायक अपनी प्रिया के रूप में विभोर, नायिका का अंकन स्वयं या किसी चित्रकार से करवाता नजर आता है। ऐसे नाटकों में महाकवि कालीदासकृत नाटक 'मालविकाग्निमित्रम' तथा 'अभिज्ञानशाकुंतलम' के उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं। 'महाकवि कालिदास के नाटकों में नारी के सौन्दर्य तथा चित्रमय स्वरूप एवं चित्रांकन के अनेक उदाहरण प्राप्य हैं। महाकवि कालिदास के प्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुन्तलम् में राजा दुष्यन्त अपने विरह व्यथित मन की शान्ति के लिए शकुन्तला का एक सौन्दर्ययुक्त मोहक चित्र आँकते हैं, विदूषक जिसकी खूब सराहना करता है।'[11]

सिन्धु सभ्यता को अत्यन्त प्राचीन सभ्यता माना जाता है। इस सभ्यता से सामाजिक ताने–बाने के अनेक प्रमाण प्राप्त हुए हैं। यद्यपि अभी इस सभ्यता के अवशेष से प्राप्त लिपि पढ़ी नहीं जा सकी है परन्तु फिर भी अनेक ऐसे प्रमाणों का अध्ययन किया गया है जिससे सैन्धव कालीन सभ्यता की उत्कृष्टता का पता चलता है। डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्ता लिखते हैं कि 'सैन्धव कालीन सभ्यता के अध्यनोपरान्त हम यह कह सकते हैं कि वहाँ कला के नाम पर जो सृजित वस्तुएँ उपलब्ध हुई हैं, उनमें मिट्टी के खिलौने, मूर्तियाँ, मुहरें तथा पात्र ही प्रमुख हैं। पक्की मिट्टी के खिलौने वहाँ के जनमानस की लोक–कृतियों का भास कराते हैं। लोक जीवन का सच्चा रूप प्रस्तुत करने वाले मृण पात्र व खिलौने, पशु–पक्षियों के आकार वाले वाद्य यंत्र बड़े ही सुन्दर हैं जो पक्के मिट्टी से निर्मित हैं। उनका कलात्मक रूप दर्शनीय है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ों के भूगर्भ से निकले कला के प्रतीक आंकलन के इतिहास पर अपने गहरे पद–चिन्ह छोड़ गये हैं। कांसे की तन्वगी नर्तकी, नर्तनशील पद विहीन प्रस्तरीय धड़, पूंजीभूत बल का अप्रतिम मान मुद्रागत वृषभ, उस सुदूर प्राचीन सभ्यता के संसार में बेजोड़ हैं।'[12]

भारतीय चित्रकला में नारी को प्राथमिकता ही नहीं बल्कि उच्च स्तर भी प्रदान किया गया है। डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्ता लिखते हैं – 'भारतीय चित्रकला में नारी के अंकन को उच्च स्तर प्रदान किया गया है। उसे आदर्श नारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। देवी के उन नाना मुद्राओं का चित्रांकन किया गया है जिनमें काव्यात्मक गुण विद्यमान हैं। रिक्त मन्दिर का कोई मूल्य नहीं होता। हमारी चित्रविद्या में नारी मन्दिर में पूजित देवी के समान है। भारतीय चित्रों में नारी चित्रांकन कहीं की अनुकृति नहीं है सभी जगन्माता की लीलायें हैं।'[13]

आज भी नारी चित्रों को प्राथमिकता के साथ अंकित किया जाता है। एक उदाहरण के रूप में देखा जाए तो – 'बाण ने लिखा है कि राज्यश्री के विवाह के समय बहुत से पुस्तकार बुलाये गये थे।'[14] इसी बात को प्रसिद्ध लेखक वासुदेवशरण अग्रवाल अपनी पुस्तक भारतीय कला में लिखते हैं– 'जब राज्यश्री का विवाह हुआ तो अंजलिकारिका नामक गूजरियाँ या गूजर स्त्रियाँ वेदी के चारों ओर सजाई गई थीं, जैसी आजकल भी बनती हैं।'[15] ऐसा नहीं है कि नारी के प्रति कोरी शारीरिक आसक्ति के कारण ही उसके चित्र अंकन को विषय वस्तु बनाया गया हो। नारी ने अपने आपको हर क्षेत्र में एक आदर्श पहचान दी है, जिसके कारण उसका आन्तरिक और बाह्य दोनों ही सौन्दर्य में दैविय रूप के दर्शन होते हैं। डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त लिखते हैं– 'नारी को उसके गुणात्मक स्वरूप के कारण ही आत्मज्ञानी योगियों ने ध्यान किया है। उन्हें जिस सौन्दर्य का साक्षात्कार हुआ उसके अनेक भाव विधानों में अनेक रूप की कल्पना की गयी है। उनका कल्पित रूप भौतिक नहीं है। भारतीय चित्रविदों ने नारी को देवी माना है। अजन्ता में यशोधरा द्वारा अपने पुत्र को दान देने का चित्र अंकित है। समक्ष ही भगवान बुद्ध भिक्षु रूप में खड़े हैं। मात्रित्व व पुत्र स्नेह का परित्याग कर अपने बेटे को तथागत के चरणों में समर्पित करने वाली भारतीय नारी की श्रेष्ठ भावना व पवित्र त्याग का अंकन भारतीय चित्र कला में ही सम्भव है, जहाँ का चित्रकार नारी में उसके गुणात्मक रूप के कारण ही उसे देवत्व की कोटि में रख देने की क्षमता रखता है।'[16]

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि भारतीय चित्रकला में नारी चित्रों को प्राथमिकता दी गयी है। जिसमें उसके आन्तरिक और बाह्य सौन्दर्य को चित्रित किया गया है। नारी के सर्वगुण सम्पन्न होने के कारण ही उसे समाज में दैवीय रूप प्राप्त हुआ है। वह सृष्टि की मूलाधार मानी गयी है। नारी के आदर्श रूप को प्रेरणास्रोत मानकर उसे मन्दिरों में स्थापित किया गया है। कुल मिलाकर भारतीय संस्कृति में नारी को न सिर्फ चित्रकला में बल्कि अनेकानेक स्थानों पर प्राथमिकता के साथ वर्तमान में भी सम्मान प्राप्त है।

सन्दर्भ

1. कलानां प्रवरं चित्रं धर्मार्थकाममोक्षदं। मांगल्य प्रथम् दोतद् गृहे यत्र प्रतिश्ठितम्।
2. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–15
3. यत्र पूज्यन्ते नारी, रमन्ते तत्र देवताः।
4. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–18
5. भारतीय कला, वासुदेवशरण अग्रवाल, पृथिवी प्रकाशन वाराणसी, पंचम पुनर्मुद्रण 2007, पृ0 सं0–322
6. भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, डॉ. रीता प्रताप, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, तीसरा संस्करण 2008, पृ0 सं0–30
7. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–18
8. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–19

9. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–20
10. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–23
11. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–26
12. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–38
13. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–28
14. लेप्यकारकदम्बकक्रियमाणमृण्यमीनकूर्ममकरनालिकेरकदलीपूगवृक्षकम्। हर्षचरित, उच्छवास 4
15. भारतीय कला, वासुदेवशरण अग्रवाल, पृथिवी प्रकाशन वाराणसी, पंचम पुनर्मुद्रण 2007, पृ0 सं0–322
16. भारतीय चित्रकला में नारी अंकन, डॉ. दिनेश चन्द्र गुप्त, धर्मा प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003, पृ0 सं0–29